# भक्ति आंदोलन

भागवत विषयक प्रेम को भक्ति कहते हैं जब भक्त अपने ईश्वर से इतना गहरा प्रेम करने लगे कि उसके बिना जीवन असंभव लगने लगे तो उसे भक्ति की चरम अवस्था कहते हैं। भक्ति के लिये संपूर्ण समर्पण एवं अहंकार का त्याग आवश्यक है।

भक्ति आंदोलन का विकास → 8 वी, 9 वी सदी में दक्षिण भारत में नयनार एवं आलवार संतो के नेतृत्व में भक्ति आंदोलन का प्रादुर्भाव हुआ और लगभग दो शताब्दियों तक दक्षिण भारतीय शासकों के संरक्षण में इसका पर्याप्त विकास हुआ। किन्तु जब शंकराचार्य ने अद्वैतवाद की संकल्पना प्रस्तुत कर आत्मा एवं परमात्मा की पृथक सत्ता की बजाय केवल ब्रह्म अर्थात परमात्मा की एकमात्र सत्ता के रूप में व्याख्या की तो भक्ति की संकल्पना को पौराणिक चोट लगी। फिर भी किसी न किसी रूप में नाथमुनि, यमुनाचार्य आदि संतो ने भक्ति की धारा को जीवित रखा। — बाद में वैष्णव आचार्यो रामानुज वल्लभाचार्य आदि ने भक्ति के लिये पुनः भक्त एवं भगवान की द्वैत सत्ता की व्याख्या प्रस्तुत की तो भक्ति आंदोलन पुनः एक बार तीव्र रूप धारण कर लिया। भक्ति आंदोलन का चरम विकास तब आरम्भ हुआ जब इसे रामानुज के शिष्य रामानन्द जी ने उत्तर भारत में प्रसारित करना शुरू किया। कहा भी जाता है "भक्ति उपजी द्रविड़, उत्तर लाये रामानन्द"। रामानन्द के 12 शिष्यों में जिनमें कबीर सर्वप्रमुख थे भक्ति आंदोलन को व्यापकता प्रदान की।

Scanned with CamScanner

व्यापकता → दक्षिण भारत में उदित हुई भक्ति आंदोलन 15 वी - 16 वी शताब्दी में लगभग पूरे उत्तर भारत, उत्तर पश्चिमी एवं पूर्वी भारत में फैल गया। पंजाब में गुरु नानक, राजस्थान में मीराबाई, गुजरात में नरसी मेहता, महाराष्ट्र में ज्ञानेश्वर नामदेव, तुकाराम, रामदास उ० प्र० में कबीर, सूर तुलसी, बंगाल में चैतन्य, असम में शंकरदेव, कश्मीर में लालदेद।

कुल मिलाकर भक्ति एवं सूफी आंदोलन लगभग पूरे भारत में व्याप्त था और उदार समन्वयवादी तथा प्रगतिशील विचारों को प्रसारित कर रहा था।

भारत में भक्ति आंदोलन निर्गुण और सगुण दो धाराओं में विभक्त था।

निर्गुण धारा → एकेश्वरवाद में विश्वास, अमूर्त ब्रह्म की परिकल्पना, निराकार एवं अगम्य

→ गुरु का मार्गदर्शन आवश्यक

→ अवतारवाद की संकल्पना नहीं

→ मानवीय एकता के सिद्धान्त में विश्वास

→ वर्णीय - धार्मिक विषमता का विरोध

→ वर्ण व्यवस्था व जातिप्रथा की कटु आलोचना

→ साम्प्रदायिक मान्यताओं पर प्रहार

→ धार्मिक क्षेत्र में बाह्य आडम्बर, कर्मकाण्ड, तीर्थस्थल मूर्तिपूजा, अजान, नमाज आदि की आलोचना

→ कबीर, नानक, दादू, रैदास आदि प्रमुख सन्त

Scanned with CamScanner

**सगुण धारा** → ईश्वर मूर्त रूप में
ईश्वर की मूर्ति के माध्यम से आराधना

→ अवतारवाद < राम – रामानुजाचार्य का विशिष्टाद्वैतवाद – तुलसीदास
कृष्ण – वल्लभाचार्य का शुद्धाद्वैतवाद – सूरदास

→ समन्वयवादी विचार को प्रस्तुत किया। वर्ण व्यवस्था
→ साम्प्रदायिकता की कुरीतियों को समूल नष्ट नहीं करना चाहते थे बल्कि उसमें जो व्यवस्थागत बुराइयाँ आ रही थी, उनमें सुधार का प्रयास किया
→ वर्णव्यवस्था का कर्ममूलकता सहित समर्थन

तुलसीदास ने निर्गुणों – सगुणों के मतभेद पर विचार प्रकट करते हुए कहा कि निर्गुण और सगुण में कोई भेद नहीं। दोनों संसार के दुखों को हरने वाला है। जो चिन्तन के स्तर पर निर्गुण है प्रेम और भक्ति के फलस्वरूप सगुण रूप धारण कर लेता है।

Scanned with CamScanner

# भक्ति आंदोलन की विशेषतायें-

① **भक्ति की केन्द्रीयता** | पूरे भक्ति आन्दोलन के केन्द्र में भक्ति ही प्रमुख तत्व था | भक्ति आंदोलन की केन्द्रीयता का तात्पर्य था कि पूरे भक्तिकाल के दौरान भक्त सन्तों धर्म, समाज, अर्थव्यवस्था राजनीति अर्थात कुल मिलाकर पूरी भारतीय संस्कृति को प्रभावित किया और उसके दुर्गुणों पर चोट की | किन्तु भक्ति संतो का मूल उद्देश्य भक्ति करना था न कि धर्म अथवा समाज सुधार | भक्ति मार्ग में जिन अवरोधक की पहचान कर पाते थे, उसकी वे आलोचना करते थे | जैसे बहुदेववाद, मूर्तिपूजा, जाति विषमता इत्यादि

② एकेश्वरवाद में विश्वास

③ गुरू की महत्ता पर बल

④ सरल तथा आडम्बरहीन स्वरूप

⑤ जाति प्रथा का विरोध

⑥ समन्वयात्मक दृष्टिकोण

⑦ सदाचार एवं आत्मसंयम पर बल

⑧ लोकभाषा

Scanned with CamScanner

## भक्ति आंदोलन का स्वरूप

(1) दार्शनिकता के स्थान पर भक्ति की सुगमता पर बल

(2) भक्ति की केन्द्रीयता

(3) गुरु परम्परा पर जोर

(4) मानवीय प्रगतिशील एवं प्रेममार्गी होने के कारण सामाजिक समरसता के सिद्धान्त पर विश्वास।

(5) सृजनात्मक प्रवृत्ति होने के कारण धार्मिक जातीय खंडता विरोधी

(6) समन्वयात्मक दृष्टिकोण

(7) नैतिक सदाचार एवं संयम पर बल

(8) जनभाषा पर बल

Scanned with CamScanner